भारत में भ्रष्टाचार की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि : एक समीक्षा

डॉ० मोनिका कुमारी
एम० ए०, पीएच० डी०
लोक प्रशासन विभाग
वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा।

भ्रष्टाचार एक सापेक्ष अवधरणा है। किसी युग विशेष में इसका क्षेत्र सीमित हो सकता है और किसी दूसरे युग में विस्तृत। वैयक्तिक सम्पत्ति की भावना ने, व्यक्ति के आचरण, नैतिकता व सोच को भ्रष्ट बनाया है। धर्मिक युगों में समाज इतना भ्रष्ट नहीं था जितना कौटिल्य युग तक आते–आते हो गया। चन्द्रगुप्त मौर्य की अभिलाषा व महत्वाकांक्षा साम्राज्यवाद की स्थापना करना था। यह युग आर्थिक विकास और प्रगति का था। वैयक्तिक सम्पत्ति के प्रति पिपासा बढ़ रही थी। कौटिल्य कालीन समाज में भ्रष्टाचार में काफी वृद्धि हुई। इसके शासनकाल में भ्रष्टाचार सार्वजनिक जीवन और प्रशासन में कहीं गहरे प्रवेश कर गया था। इसीलिए इस पर अंकुश लगाने हेतु अनेक प्रकार की कार्यवाही, जैसे– पण्याध्यक्ष, पीताध्यक्ष, शुल्काध्यक्ष, सुत्राध्यक्ष, चुंगी–अध्यक्ष आदि की नियुक्ति की गई। ये अध्यक्ष अपने क्षेत्रों में बढ़ रहे भ्रष्टाचार को नियन्त्रित करने के लिए कार्यवाही करते थे।

भारत में भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देने में ईष्ट इण्डिया कम्पनी की महत्वपूर्ण भूमिका है। इस कम्पनी का एकमात्र उद्देश्य था कि भारत में अपने व्यापार का विस्तार करें। इस देश को जितना लूट सके, उतना लूटें। जितना धन व सम्पत्ति यहाँ से इंग्लैंड ले जा सके, ले जाए। यहाँ के जमींदारों, राजाओं व महाराजाओं को तरह–तरह के प्रलोभन देकर उन्हें भ्रष्टा बनाया गया एवं अपने स्वार्थो की पूर्ति की। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि भारत में ही भ्रष्टाचार बढ़ रहा था, बल्कि साम्राज्यवादी शक्तियाँ सम्पूर्ण विश्व में अपने स्वार्थो की पूर्ति के लिए भ्रष्ट नीतियों को अपनाने में हिचकती नहीं थी। इंग्लैंड के राजा जार्ज लार्ड के लिए तो यहाँ तक कह दिया गया कि उसने ब्रिटिश संसद को घूस देकर अपनी ओर मिला लिया था।

भ्रष्टाचार कम या अधिक मात्रा में सम्पूर्ण विश्व में विद्यमान है। सन् 1996 में 49 देशों के सर्वेक्षण के आधार पर 'द ग्लोबल कम्पटीशन्स रिपोर्ट' प्रकाशित हुई थी, जो विश्वभर में फैली भ्रष्टाचार की महामारी की व्यापकता को दर्शाती है। भ्रष्ट देशों की गिनती के क्रम में भारत का स्थान आठवाँ पाया गया। वैसे भ्रष्टाचार भारत के लिए कोई नई घटना नहीं है। हजारों वर्षो पूर्व से ही यह सामाजिक बुराई यहाँ विद्यमान थी। ब्रिटिश शासन के दौरान अंग्रेजों ने भ्रष्टाचार को अपना औजार बनाया और घूस देने की प्रथा प्रारम्भ की। स्वतंत्रता के पश्चात् 66 वर्षो में भ्रष्टाचार की व्यापकता ने तो इस देश की आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था को ही निगल डाला।

सदियों से भारत जो एक धर्मिक आदर्शो व मूल्यों वाला देश माना जाता था। आज भ्रष्टाचार का आवरण ओढ़कर नैतिकता, मूल्य, आदर्श, मर्यादा, देशभक्ति, समर्पण की भावना को तिलांजलि दे रहा है। देश की बागडोर जिनके हाथों में है वे ही इस देश को लूट रहे है। देश के आम लोगों के खून–पसीने से कमाई गई धनराशि से प्राप्त देश के राजस्व को देशभक्त कहलाए जाने वाले ये नेता, मंत्री और प्रशासनिक अधिकारी सरकारी विभागों में करोड़ो और अरबों रुपये के घोटाले करके अपनी तिजोरियाँ भर रहे हैं। इस प्रकार स्वतंत्र भारत में अपने ही देश के नेता, मंत्री, कमाजसेवक, अधिकारी, व्यापारी सब मिलकर गरीब देश की जनता के धन लूट रहे हैं। इस भ्रष्टाचार का ही परिणाम है कि विश्वके धनी देश भारत को आर्थिक सहायता देना बन्द करने की घोषणा करने लगे हैं। यूँ तो देश का हर प्रधनमंत्री 15 अगस्त को लालकिले की प्राचीर से देश को सम्बोधित करते हुए देश से भ्रष्टाचार को मिटाने का संकल्प हो रहा है और घोषणा करता है कि उसकी सरकार भ्रष्टाचार को मिटाकर रहेगी। परन्तु वही ढाक के तीन पात, सरकार आकर चली भी जाती है, पर भ्रष्टाचार मिटने की बजाय बढ़ता ही जाता है। भारत में भ्रष्टाचार अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया है। भ्रष्टाचार मध्यम और निम्न वर्ग के लिए अभिशाप बन गया है। इस देश में अब सरकारों का कोई नैतिक चरित्र नहीं रह गया है। वह समय दूर नहीं है जब भ्रष्टाचारी को सार्वजनिक रूप से समानित किया जाएगा। आधुनिक भारत में भ्रष्टाचार समाज का अभिन्न अंग है। औद्योगीकरण एवं वैयक्तिक सम्पत्ति की भावना, व्यक्ति की भोगवादी प्रवृति ने सम्पूर्ण समाज में भ्रष्टाचार को प्रसारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अभिनीत की है। आज भारत में शायद ही कोई ऐसा

विभाग हो जहाँ इसकी काली छाया न पड़ी हो। सदाचार अब कदारचार बन गया है। भारत की सम्पूर्ण सांस्कृतिक विरासत ईमानदारी और नैतिकता, मानवीय आदर्श एवं मूल्य को देखते–देखते भ्रष्टाचार ने निगल लिया है। किसी युग विशेष में इसका क्षेत्र सीमित हो सकता है और किसी दूसरे युग में विस्तृत। वैयक्तिक सम्पत्ति की भावना ने व्यक्ति के आचरण, नैतिकता व सोच को भ्रष्ट बनाया है। धर्मिक युगों में समाज इतना भ्रष्ट नहीं था जितना कौटिल्य युग तक आते–आते हो गया। चन्द्रगुप्त मौर्य की अभिलाषा व महत्वाकांक्षा साम्राज्यवाद की स्थापना करना था। यह युग आर्थिक विकास और प्रगति का था। वैयक्तिक सम्पत्ति के प्रति पिपासा बढ़ रही थी। कौटिल्य कालीन समाज में भ्रष्टाचार में काफी वृद्धि हुई। इसके शासनकाल में भ्रष्टाचार सार्वजनिक जीवन और प्रशासन में कहीं गहरे प्रवेश कर गया था। इसीलिए इस पर अंकुश लगाने हेतु अनेक प्रकार की कार्यवाही जैसे– पण्याध्यक्ष, पीताध्यक्ष, शुल्काध्यक्ष, सुत्राध्यक्ष, चुंगी–अध्यक्ष आदि की नियुक्ति की गई। ये अध्यक्ष अपने क्षेत्रों में बढ़ रहे भ्रष्टाचार को नियन्त्रित करने के लिए कार्यवाही ही करते थे।

भारत सहित दुनिया के जितने भी धर्मग्रंथों एवं कानून संहिताऐं हैं उनमें भ्रष्टाचार को अनुचित माना गया है। उदाहरणार्थ 'ओल्ड और न्यूरेस्टामेंट' में भ्रष्टाचार को अपवित्र माना गया हैं जस्टीनियम कानून के तहत भ्रष्टाचारी को कठोर सजा देने की वकालत की गयी है। 'मनुस्मृति' में भ्रष्टाचार को अवैध करार दिया गया है। इसमें यह भी कर दिया गया है कि यदि कोई ब्राह्मण भी भ्रष्टाचारी हो तो वह भी सजा का भागीदार है। इसके अतिरिक्त रोमन सिविल कानून एवं ब्रिटिश के कॉमन लॉ में सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार को एक घोर अपराध घोषित कर दिया गया है। तथा इसके लिए एक कठोर दण्ड का प्रावधन किया गया है।

जहाँ तक भ्रष्टाचार की पृष्ठभूमि का सवाल है तो इतिहास के तीनों कालों में इसका अस्तित्व रहा है चाहे प्राचीन एवं मध्यकाल में यह सीमित ही क्यों न हो। वैसे बेबोलिनिया सभ्यता के दौरान हम्मुरावी कानूनों में सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार का वर्णन किया गया है। हालांकि इसके पीछे जबरदस्त कारण यह हो सकता है कि उन कालों ;प्राचीन एवं मध्यद्ध में प्रशासन में तकनीकी कमी हो। हमारा इतिहास तो बताता है कि भ्रष्टाचार का प्रेत तो रामायण, महाभारत एवं मौर्य साम्राज्य में भी विद्यमान था। महान कूटनीतिज्ञ एवं दार्शनिक चाणक्य ने तो तस्लीम किया है कि उस समय मौर्य काल में भी भ्रष्टाचार था। भ्रष्टाचार के परिप्रेक्ष्य में उनका मन्तव्य है जिस प्रकार जिहवा के पर रखे हुए शहद का स्वाद न लेना असंभव है उसी प्रकार किसी शासकीय कर्मचारी के लिए राजस्व के एक अंश का भक्षण न करना असंभव है। कौटिल्य का यह कथन तो आज के संदर्भ में शत–प्रतिशत खरा उतर रहा है जिसके गवाह हमारे समाज एवं राष्ट्र के लोग है। इसके अलावे सल्तनत और मुगल काल भी भ्रष्टाचार से अछूते नहीं थे। फिर आधुनिक काल में जब हमारा प्रशासकीय तंत्र ईस्ट इंडिया कम्पनी के हाथों में चला गया तो उस समय भ्रष्टाचार का पाँव लगभग सम्पूर्ण देश में पसर सा गया। ईस्ट इंडिया कम्पनी के व्यापारी लोग भ्रष्टाचार में प्रमुख सूत्रधर थे और ये लोग अर्थ लोलूपता में अपनी आदर्श एवं नैतिकता की सम्पूर्ण सीमा को लांघ चुके थे। ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारीगण भारतीय सौदागरों एवं जमीनदारों से 'डाली' के रूप में मोटी रकम ग्रहण करते थे। अंग्रेज अपने देश के प्रति सम्पत्ति एवं निष्ठावान अवश्य थे। लेकिन अपने गुलाम देशाों की जनता को घूस लेने में पूर्णरूपेण प्रशिक्षित कर चुके थे। कम्पनी के गवर्नर, लार्ड क्लाइव जो शुरू में क्लर्क था भी भ्रष्टाचार के आरोपित थे। जिसके कारण उन्होंने बाद में आत्महत्या भी कर ली। उसके फलस्वरूप ब्रिटिश सरकार ने भारत का प्रशासन कम्पनी से ले लिया और इसका संचालन स्वयं करने लगे। वैसे इसने ब्रिटिश सरकार ने अपने 150 वर्षो के शासन काल में भारतीय प्रशासन में पुलिस राजस्व और अवकारी विभागों में उनके अधिकारियों को स्वविवेक का अधिकार प्राप्त था। जिसके चलते उन अधिकारियों को भ्रष्टाचार फैलाने का भरपूर मौका मिला। यहाँ तक कि छोटे अदालतें भी इस दलदल में फंस चुकी थी। वैसे द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान परमीट कोटा लाइसेंस के प्रयोग से उपभोक्ता के दैनिक प्रयोग की सामग्री की कमी कालाबाजारी और कर चोरी बहुत व्यापक हो गये थे। परन्तु भ्रष्टाचार निम्नस्तर तक ही पहुँच सका था। उस समय उच्च अंग्रेज अधिकारी अपने राष्ट्रहितों के प्रति समर्पित राष्ट्र अहित की कीमत पर अपने किसी व्यक्तिगत आर्थिक लाभ से परहेज करते थे तथा सामान्य निकटता से भी उनकी कोई निकटता नहीं रहती थी। उनकी शिक्षा–दीक्षा इंग्लैंड में होती थी और सेवा–निवृत के उपरांत वे पुनः ब्रिटेन की ओर कूच कर जाते थे। यह भी देखा गया है कि आजादी के बाद कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, दक्षिण अफीका की तरह अंग्रेज भारत में नहीं रहे। उन्हें मोटी रकम के रूप में वेतन मिलता था, जिसके फलस्वरूप उनके द्वारा कोई आर्थिक अनियमितताएँ नहीं होती थी और स्वतंत्रता के प्रारंभिक दौर तक भ्रष्टाचार अपना सर नहीं उठा सका था। ब्रिटिश युग में प्रायः यह कहा जाता था कि भ्रष्टाचार चपरासियों तथा राजस्व विभागों में लघु

कर्मचारियों तक ही सीमित था, किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश की विकास योजनाओं के साथ–साथ भ्रष्टाचार का बड़ी तेजी से विकास हुआ।

भ्रष्टाचार मानव में किसी न किसी रूप में सदैव कायम रहा है। कौटिल्य ने अपनी पुस्तक 'अर्थशास्त्र' में भ्रष्टाचार के 40 प्रकारों का उल्लेख किया है। उसके शब्दों में 'जिस प्रकार जीभ पर रखे शहद का स्वाद लेना असम्भव है उसी प्रकार किसी शासकीय अधिकारी के लिए राज्य के स्वरूप के एक अंश का भक्षण करना असम्भव है। भारत में कौटिल्य ने अपनी पुस्तक 'अर्थशास्त्र' में राज्य कोष के सरकारी कर्मचारियों द्वारा गबन किए जाने का विवरण दिया है। उसने सरकारी कर्मचारियों द्वारा अपनाए जाने वाले लगभग 40 प्रकार के गबन और अन्य भ्रष्ट तरीकों का वर्णन किया है। अशोक के शासनकाल में भ्रष्टाचार का क्षेत्रा कम था क्योंकि कर वसूल के लिए कम से कम अध्किारी थे। जितना अधिक धन संग्रह वे लोग करते थे उतनी ही उनकी प्रशंसा होती थी, न कि उन पर दोष लगाया जाता था।

प्राचीन काल में समुदायों का आकार बहुत छोटा था। समुदाय में प्रत्येक व्यक्ति दूसरे को व्यक्तिगत रूप से जानता था। व्यक्मितयों के बीच प्राथमिक सम्बंधें की प्रधनता थी। प्राथमिक नियंत्रण इन समुदायों की विशेषता थी तथा समाज के आदर्श नियमों के उल्लंघन पर व्यक्ति को दण्ड के लिए किसी प्रकार की औपचारिक न्याय व्यवस्था का कोई महत्व नहीं था। धर्म और नैतिकता स्वयं इतनी बड़ी शक्तियाँ थीं किसी बाहरी दबाव के बिना भी व्यक्ति ईमानदारी, सच्चरितत तथा कर्तव्य पूर्ति को एक महत्वपूर्ण मूल्य के रूप में मान्यता प्रदान करता था। इसके प्रश्चात जैसे–जैसे समुदायों का आकार बड़ा होने लगा, एक नवीन राजनीतिक व्यवस्था की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इस नई राजनीतिक व्यवस्था और विशेषकर जनतंत्रा प्रणाली में जहाँ व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और समाज कल्याण को राज्य का सबसे बड़ा लक्ष्य माना गया, वहीं व्यापक राजनीतिक तन्त्र का संचालन करने के लिए सुपरिभाषित कानूनों के द्वारा व्यक्तिगत व्यवहारों की विवेचना करना आवश्यक समझा जाने लगा। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गवाहियों पर आधरित एक औपचारिक न्याय व्यवस्था को लागू किया गया तथा शासन के प्रत्येक स्तर पर बहुत से बड़े–बड़े अधिकारियों और सामान्य कर्मचारियों को नियुक्त करके उन्हें इतने अधिकार दे दिये गये कि वे अपने क्षेत्र के जन–जीवन को नियमित रख सके। जनतंत्र के यही प्रकार्य कुल समय बाद इस व्यवस्था के अकार्य बन गये। पहले अधिकार सम्पन्न व्यक्तियों ने अपने अधिकारों का उपयोग व्यक्तिगत लाभ के लिए करना आरंभ किया और बमें समाज के दूसरे वर्गो ने उनका अनुकरण करना आरम्भ कर दिया।

वर्तमान में भ्रष्टाचार उच्च लोक सेवकों, मंत्रियों और मुख्यमंत्रियों के स्तर तक पहुँच चुका हैं आज यह हालत है कि जनता, भ्रष्ट कर्मचारियों के आचरण से दुखी होकर रिश्वत देने को अपना धर्म मानने लग गई है। स्वतंत्रता के छः दशक बाद भी भारत में भ्रष्टाचार का यह हाल है कि ड्राइविंग लाइसेंस बनवाना हो, पासपोर्ट लेना हो, कोई उद्योग लगाना हो, किसी हवाई पट्टी या बन्दरगाह से अपना कोई माल निकलवाना हो, किसी सरकारी अस्पताल में मरीज को भर्ती करवाना हो या फिर सिर्फ किसी बड़े साहब से मिलना हो, तो जब तक पैसे नहीं खिलाएँ जायेगे, आपका कोई भी सरकारी काम हो ही नहीं सकता। भ्रष्टाचार का अन्दाजा इसी से लगाया जा सकता है कि यदि आप किसी सरकारी नौकरी के लिए इच्छुक युवा से पूछें कि वह सरकारी नौकरी क्यों करना चाहता है, तो वह वेझिझक जवाब मिलता है : ऊपरी आमदनी के लिए।

भ्रष्टाचार विकास का सर्वाधिक बाधक पहलू है। आज भ्रष्टाचार एवं अपराध न केवल विधि–व्यवस्था के मार्ग में व्यवधन है, वरन विकास के रास्ते का सबसे बड़ा रोड़ा है। भ्रष्टाचार मूल बीमारी है, तो अपराध उसका केवल एक अंग। वर्तमान में अपराध एवं भ्रष्टाचार इस तरह घुल–मिल गया है और अर्थव्यवस्था पर ऐसा प्रहार कर रहा है कि अर्थव्यवस्था भ्रष्टाचार का शिकार बनकर रह गया है। अर्थव्यवस्था में भ्रष्टाचार नहीं वरन भ्रष्टाचार में अर्थव्यवस्था है। यह कोई लोकोक्ति नहीं वरन वास्तविकता है, सार्थक सत्य है।

संदर्भ ग्रंथ

[1] भारत में भ्रष्टाचार – संजीवी गुटन, पब्लिक अपफेयर सेन्टर, 1997

[2] भारत में राजनीतिक भ्रष्टाचार – जीú एसú भार्गव पोपुलर बुक सर्विस, 1967

[3] भारत में भ्रष्टाचार – आरú केú गुप्ता अनामिक पब्लिसर, 2007

[4] जन लोकपाल बिल एक परिचय – एमú केú सिंह पिफल्पिकार्ड पब्लिकेशन, 2010

[5] भ्रष्टाचार एवं लोकपाल – एमú वीú कामत हिन्दू सोर्सबुक, 2011

[6] भारत में लोकप्रशासन – डॉ चेतकर झा नोवेल्टी प्रकाशन पटना।

[7] लोकप्रशासन – बीú एलú पफरिया साहित्य भवन, 1999
[8] कौटिल्य का अर्थशास्त्र, 1953
[9] क्रप्शन इन इंडिया, 2003 रैडिफ – एनú केú मित्तल।
[10] लोकपाल फैक्टस एण्ड आरगुमेंन्टस 2011 बीú पीú राव।
[11] कुरूक्षेत्र 2011– 2012
[12] दैनिक जागरण नियमित
[13] प्रभात खबर नियमित